Symbol of oneness
DHYAN-KAKSH
SCHOOL OF EQUANIMITY & EVEN-SIGHTEDNESS

ध्यान-कक्ष

समभाव-समदृष्टि का स्कूल

संतोष विकसित करने का साधन

एकता का प्रतीक

सतयुग की पहचान है यह, मानवता का स्वाभिमान है यह

SATYUG DARSHAN TRUST (REGD.)

मार्गदर्शक बल

(Guiding force)

सतवस्तु का कुदरती ग्रंथ

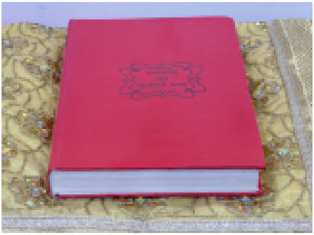

पढ़ो, समझो व अमल में लाकर
श्रेष्ठ मानव बन जाओ।

इसे पढ़ने के लिए इस QR Code को स्कैन करें।

प्रकाशक
सतयुग दर्शन ट्रस्ट (रजि.)
"वसुन्धरा" ग्राम भूपानी–लालपुर रोड फरीदाबाद–121002 (हरियाणा)
ई–मेलः info@satyugdarshantrust.org | website: www.satyugdarshantrust.org
© सर्वाधिकार सुरक्षित सतयुग दर्शन ट्रस्ट (रजि.) | ISBN : 978-93-85423-74-1

प्रथम संस्करण | अप्रैल, 2025

साडा है सजन राम, राम है कुल जहान

अर्थात्

ईश्वर हमारा मित्र/प्रियतम सर्वव्यापक है,

उसी को जानो, मानो व वैसे ही गुण अपनाओ।

शब्द है गुरु, शरीर नहीं है,

अर्थात्

ज्ञानी को नहीं, ज्ञान को अपनाओ और

निमित्त में नहीं नित्य में श्रद्धा बढ़ाओ।

इस पर सुदृढ़ता से डटे रह,

इस अटल सत्य पर स्थिर बने रहो

ओ३म् अमर है आत्मा,

आत्मा में है परमात्मा

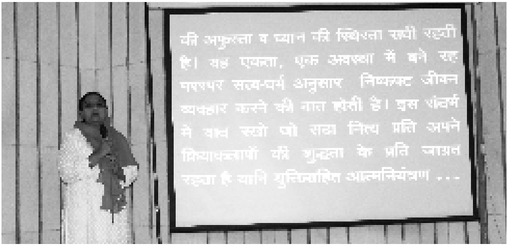
है। यह एकता, एक अवस्था में बने रह
व्यवहार करने की बात होती है। इस संदर्भ

सच्चाई
धर्म
सम

संतोष विकसित करने का साधन

सजनों कहा गया है:-

सुख की प्राप्ति, कामना की पूर्ति में नहीं अपितु सच्चे सन्तोष की प्राप्ति में है।

ऐसा इसलिए क्योंकि संसारी विषयों को भोगने से प्राप्त होने वाली संतुष्टि क्षणिक होती है यानि यह कुछ पलों की प्रसन्नता तो अवश्य प्रदान कर सकती है पर चित्त को शाश्वत शांति प्रदान कर आनंदित नहीं कर सकती। इसी बात को अन्य शब्दों में कहें तो विषयों के भोग से मानव की क्षुधा यानि भूख कभी नहीं मिटती। सब कुछ प्राप्त हो जाने पर भी मानव और-और की तलाश में भटकता रहता है और आशा-तृष्णा के चक्रव्यूह में फँस सांसारिक भोगों की प्राप्ति को ही असली तुष्टि समझ, आजीवन उन्हीं के पीछे मृगतृष्णा की भांति भटकता हुआ अपना जीवन गँवा बैठता है। हमारे

साथ ऐसा न हो इसलिए सतवस्तु का कुदरती ग्रंथ हमें कह रहा हैः-

आशा तजो, तृष्णा तजो,
भैणां दिल तों तजो अभिमान।
इको रूप पछान लवो,
बली पूरण कर देसन काम।।

मिथ्या सब संसार है, मिथ्या सब जहान।
महाबीर जी ए फरमा रहे, इको रूप पछान।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, प्रथम सोपान, भजन न० 53)

अर्थात् आत्मज्ञान से उत्पन्न आत्मसंतोष जो कि अलौकिक आत्मिक उपलब्धि है, प्राप्त करो। निश्चित रूप से इसको प्राप्त करने हेतु मन की दृढ़ता परम आवश्यक है। ऐसा इसलिए क्योंकि मन के अचंचल यानि आत्मस्वरूप में स्थिर होने पर ही कोई भी सांसारिक घटक उसे अपनी ओर

आकृष्ट नहीं कर पाता। तभी तो ऐसा मानव लौकिक आकर्षणों व अन्यों का कुछ प्राप्त करने की अवांछनीय इच्छा से विरत यानि दूर बना रह, सहज प्राप्ति के प्रति पूर्ण संतुष्ट बना रह पाता है। ज्ञात हो, मनुष्य में यह प्रवृत्ति जितनी गहराई से प्रविष्ट (Enter) होती जाती है, वह निजी जीवन में उतना ही अधिकाधिक वैरागी, अनासक्त, उदासीन (सांसारिक मोह आदि से निर्लिप्त) और अपरिग्रही यानि संग्रह करने की वृत्ति का त्याग करने में सक्षम होता जाता है। फलतः प्रसन्नता, धीरता, सत्यता, समता, निष्कामता, दया, करुणा, अहिंसा, सज्जनता आदि दुर्लभ गुण खुद-ब-खुद उसमें विकसित होने लगते हैं और वह इनके बलबूते पर समस्त प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच, अविचलित समभाव को प्रकट करता हुआ, समदृष्ट व समबुद्ध हो जाता है। इससे सारतः स्पष्ट होता है कि:-

संतोष ही सर्वोत्तम गुणों का स्रोत है व व्यक्तिगत सुखों का त्याग और लोक सेवा के मार्ग का वरण यानि चयन संतोष द्वारा ही हो सकता है।

(संतोष - अनिवार्य तत्व)

इस विवेचना से यह निष्कर्ष निकलता है:-

1. सन्तोष का आधार देह नहीं, मन है, अतः मानसिक संतुष्टि अनिवार्य है।

2. संतोष नश्वर भौतिक वस्तुओं पर आश्रित नहीं वरन् इन की वासना के त्याग पर या यथा सम्भव कम करने से प्राप्त होता है।

3. संतोष साधनों की अल्पता के मार्ग की सहर्ष स्वीकृति है। यह भावना स्वयंभू यानि अपने आप उत्पन्न होती है। किसी के दबाव या समझाने से कभी नहीं विकसित होती।

4. सन्तोष आरामपरस्ती और विलासिता से नहीं अपितु कड़ी मेहनत व तपस्या से प्राप्त होता है। तभी तो कठिन श्रम करने वाले सुखी और प्रफुल्लित दिखायी देते हैं जबकि आराम का जीवन जीने वाले अवसाद (Depression) जनित अनेक रोगों से घिरे रहते हैं।

5. जीवन के प्रति सकारात्मक या आशावादी दृष्टिकोण से संतोष का अस्तित्व सुरक्षित रहता है। विपरीत परिस्थितियों से पलायन संतोष का कार्य नहीं। इसका कार्य है प्रत्येक परिस्थिति को सहजता से स्वीकार करके उसका सामना करना।

(संतोष - विकसित करने का साधन)

सादा जीवन, उच्च विचार युक्त जीवन शैली, आवश्यकताओं और इच्छाओं के मध्य अंतर का बोध, भौतिक वस्तुओं की स्पर्धा पर नियंत्रण, तृष्णाओं के दुष्परिणामों के प्रति जागरूकता,

अपरिग्रह यानि आवश्यकता से अधिक इकट्ठा न करने में सुख की अनुभूति, अतीत के शोक व भविष्य की चिंता से मुक्त रहना, वर्तमान के प्रत्येक क्षण का सार्थक उपयोग करना, सुख और आराम के मार्ग को छोड़कर संघर्ष के मार्ग को सहर्ष स्वीकार करना, ऊर्ध्वमुखी यानि परमार्थ की ओर प्रवृत्ति तथा संसार के अनंत साधनों में त्याज्य-ग्राह्य यानि क्या छोड़ने और क्या ग्रहण करने योग्य है, उस का विवेक आदि संतोष को विकसित करते हैं। इसके अतिरिक्त अपनी आवश्यकताओं की पूर्त्ति से पहले औरों की आवश्यकताओं का ध्यान रखना व भौतिक सम्पदा का भागीदार केवल अपने को नहीं, सबको मानना जैसी भावनाओं से भी संतोष का विकास होता है।

इस तथ्य के दृष्टिगत संतोष का अपने भीतर विकास करने हेतु, भोग इच्छा पर नियन्त्रण रखो और विचारपूर्वक विवेकशक्ति से यह निर्णय लो कि

कौन सी वस्तु त्याज्य है, कौन सी ग्राह्य, क्या दुःख स्वरूप है और क्या सुख स्वरूप, कौन अनित्य है और कौन नित्य, किससे जीवन में छूटना है और किसको पाना है? इस तरह विवेक द्वारा जब भली-भांति यह जान लोगे कि इहलोक और परलोक के सब सुख भोग अनित्य और असत्य होने के कारण दुःख स्वरूप व त्याज्य हैं व केवल सत्यमेव आनन्द स्वरूप नित्य परमात्मा ही ग्राह्य है और उसी का संग प्राप्त कर ही पूर्णता को प्राप्त किया जा सकता है व अपने स्थान को पाया जा सकता है, तो निश्चित ही परमात्मा के प्रति मन-चित्त अनुरक्त हो जाएगा और आप कह उठोगेः-

महाबीर जी दे चाह दे विच राहवां,
संसार दे विच न फस जावां।।
संसार मुहब्बतां लांवदा ए,
दासी दा दिल घबरांवदा ए।
इन्हां विच न मैं मुहब्बत लावां,

संसार दे विच न फस जावां

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, प्रथम सोपान,
भजन न० 28)

ऐसा होने पर अपने आप ही विषयों के प्रति वैराग्य व काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं अहंकार के प्रति वितृष्णा उत्पन्न हो जाएगी और स्वतः ही मन व इन्द्रियाँ नियन्त्रित हो अंतर्मुखी हो जाएँगी। फिर सहज ही इच्छाओं/कामनाओं और आवश्यकताओं के मध्य में जो महीन अंतर है उसे परख, किसी बात की अपेक्षा, चिंता व इच्छा न करते हुए, सदा अपनी हैसियत में ही संतुष्ट बने रह सकोगे। इस आत्मसंतुष्टि से आत्मिक ज्ञान उत्पन्न होगा और उपरति यानि भोगों के सामने पड़े होने पर भी उनमें निरासक्ति हो जाएगी। यह निरासक्ति चित्त को सुदृढ़ता व स्थिरता यानि धीरता प्रदान करेगी और आप समस्त संशय-भौ-भ्रमों से रहित होकर, सच्चाई-धर्म के रास्ते पर निष्कामता से अग्रसर हो

अपने आत्मस्वरूप का साक्षात्कार कर सकोगे।

(संतोष प्राप्ति में बाधक तत्व काम/कामना)

काम से तात्पर्य इन्द्रियों की अपने-अपने विषयों की ओर प्रवृत्ति, फल में आसक्ति तथा आकर्षण प्रधान इच्छा विशेष से है तथा कामना से तात्पर्य अभिलाषा/मनोरथ से है। जानो काम/कामना यानि इच्छाओं की अनंतता ही असंतोष यानि हमारे दुःखों का सबसे बड़ा मूल कारण है क्योंकि इन्हीं के कारण हमारा संकल्प यानि उद्देश्य/विचार अथवा इरादा, सांसारिकता की ओर आकर्षित हो कुसंगी हो जाता है और मनोविकारों के साथ-साथ कुमति का अंकुर फूटने लगता है। अब एक कुमतिवान इंसान कैसे दुर्दशा को प्राप्त हो अपने जन्म की बाज़ी हार बैठता है, यह तो आप हम सब जानते ही हैं। अतः इसका ज़िक्र करने की आवश्यकता नहीं है।

अनमोल मानव जीवन प्राप्त कर, आप, हम, सब इस दुर्दशा को भोगने से बचे रह सकें, इस हेतु ही सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हमें संकल्प कुसंगी को सजन व संगी बना, संतोष का सवाल हल करने का निर्देश दे रहा है। इस निर्देश की पालना के तहत् आप भी अपने संकल्प को सर्वदा पवित्र व निष्कपट रखने हेतु, सत् शास्त्र का निरंतर अध्ययन, मनन, चिंतन व विवेचन करो तथा साथ ही मूल प्रणव मंत्र आद् अक्षर ओ३म् की एकरस रटन लगा, उसमें अपने मन-चित्त को लीन कर लो यानि अपने परमात्म स्वरूप में रम जाओ। इस तरह ख़्याल-ध्यान महाराज जी के साथ जोड़ कामनाओं पर फतह पा लो और संतोष का सवाल हल कर लो। आशय यह है कि 'जो मन मन्दिर, सो ही महाराज का रूप सारे जग अन्दर, जनचर-बनचर, जड़-चेतन देखते हुए', एक निगाह एक दृष्टि, एक दृष्टि एक दर्शन में स्थित हो, एकता,

एक अवस्था में आ जाओ और पूर्ण तोष प्राप्त कर, समस्त दुःखों से मुक्ति पा लो। जैसा कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा भी गया हैः-

शारीरिक स्वभावां नूं जे जितना चाहो,
कुसंगी संकल्प नूं सजन बनाओ।
फिर झुखना तुहाडा हट ही गया,
सन्तोष वल्लों जित पाओ।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, सप्तम सोपान,
भाग तीन, कीर्तन न० 16)

जानो ऐसा पुरुषार्थ दिखाने पर मन सजनता यानि आत्मीयता के भाव से युक्त हो जाएगा। फिर जीवन में चाहे दुःख आए अथवा सुख, दोनों का समान भाव से स्वागत करते हुए और उन्हें प्रभु की इच्छा समझते हुए हँस कर स्वीकारोगे और सदा समरस, समचित्त बने रह, न राग ग्रस्त होंगे, न द्वेष ग्रस्त, न हर्ष-विषाद **(शोक, निराशा)** से युक्त होंगे

न मान अपमान से पीड़ित। आशय यह है कि मन-चित्त हर परिस्थिति में निर्मल एवं अविचलित रह द्वंद्व विमुक्त पा लेगा और आप अकर्त्ता भाव से, प्राणी मात्र की सेवा के निमित्त अपने आप को निष्कामता से समर्पित कर, परमानन्द को प्राप्त कर लोगे।

(संतोष धारणा से प्राप्त होने वाले लाभ)

ज्ञात हो कि संतोष मनुष्य के अंदर मनुष्यता का भाव विकसित करने एवं उस भाव को स्थित करने के लिए अपने आप में परिपूर्ण है क्योंकि संतोष द्वारा ही मनुष्य के अंदर धीरता, शीलता, सभ्यता, शिष्टता, व्यवहार ज्ञान, सजन-भाव, दया-भाव, कोमलता, नेक नियति आदि सद्‌गुणों का उद्‌भव होता है। संतोष से ही परिष्कृत यानि संशोधित अभिरुचियाँ विकसित होती हैं तथा मन में कोई ऐसी विकृत निषिद्ध मनोवृत्ति नहीं पनपती, जो तन-

मन के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती है। विलासिता (**वैभवपूर्ण जीवन**) जो अनेक रोगों की जननी है, वह भी संतोष के उपजने पर समाप्त हो जाती है। फिर परम पुरुषार्थ की ओर मन प्रवृत्त होता है, संसारी सुख भोगों के प्रति विरक्ति उत्पन्न होती है, **ख़्याल अंतर्मुखी, वृत्ति-स्मृति व बुद्धि निर्मल होती है,** हृदय उदार होता है, पाचन शक्ति बढ़ती है, रूखे सूखे भोजन में भी भरपूर स्वाद मिलता है, शरीर बलिष्ठ, कर्मठ और ओजस्वी हो जाता है तथा मन ऊर्जावान व उत्साहित हो उठता है। **चित्त प्रसन्न होता है,** चेहरे पर चमक दिखायी देती है, शान्ति और शक्ति के साथ सुमति प्राप्त होती है और **आत्मस्वरूप में स्थिति होती है।** इस तरह संतोष द्वारा सच्चरित्र, संस्कारवान, सुशील व परकल्याण को ही अपना धर्म मानने वाले व्यक्तियों से युक्त समाज की रचना होती है, जिनका लक्ष्य सबको सुख पहुँचाना होता है। यही

नहीं, सतोष से मितव्ययता का गुण भी विकसित होता है यानि कम से कम साधनों का अधिक से अधिक उपयोग करने व अनावश्यक साधनों के संग्रह से बचने की प्रेरणा मिलती है। इस प्रवृत्ति के कारण किसी वस्तु का आकस्मिक अभाव समाज को नहीं सहना पड़ता। इसी के साथ समाज में जमाखोरी, भ्रष्टाचार, छीना-झपटी, विषमता, विद्रोह, विद्वेष, अशांति, अराजकता आदि दुर्गुण नहीं पनपते। इस तरह समाज में **'जिओ और जीने दो'** के सिद्धांत की अनुपालना अपने-आप हो जाती है। यही नहीं, संतोष अपनाने से व्यक्ति की ऊर्जा अनावश्यक नश्वर वस्तुओं के संग्रह में व्यर्थ होने से बच जाती है और वह अपनी ऊर्जा का उपयोग सामाजिक विकास के कार्यों में कर पाता है।

(निष्कर्ष)

सारतः मानो कि संतोष अपने में पूर्ण सुख है। जहाँ

यह है, वहाँ सुख के किसी साधन की आवश्यकता नहीं। अतः उपलब्ध को पर्याप्त (Sufficient) मानते हुए, आत्मस्वरूप की पहचान को यथोचित्त महत्त्व दो यानि आत्मा जो परमात्मा का ही अंश है, उस अंश को अंशी से मिलाना अपने जीवन का उद्देश्य मानो तथा उद्देश्य में बाधक, भौतिक संसार की प्रत्येक वस्तु को निःसंकोच होकर त्याग दो। यही नहीं प्रयोजन सिद्धि हेतु निकट परिवेश (वातावरण) एवं समाज में क्या कुछ घटित हो रहा है, उससे भी निर्द्वन्द्व रहना सीखो। इस प्रकार जब सकारात्मक बने रहते हुए, स्वयं को सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर का एक अंग मानकर, पुनः उसमें मिल जाने की व्याकुलता का अनुभव करोगे तो स्वतः ही इस संसार के अन्य सुख व्यर्थ प्रतीत होने लगेंगे और आप संसार की परिवर्तनशीलता तथा भौतिक भोगों की नश्वरता का ज्ञान प्राप्त कर, स्वेच्छा से उनका त्याग करने में समर्थ हो जाओगे और परम

संतोष प्राप्त कर सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ अनुसार आनन्दित हो सबको कह उठोगेः-

संतोष क्षमा दी पोशाक पहन लो,
ओ पोशाक श्री राम मतवाली
पोशाक कोई विरला पावे,
रोशनी फैले जगत ते सारी,
हम हैं श्री राम पुजारी।।

(सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ, चतुर्थ सोपान,
कीर्तन न० 68)

Learn the science of inner dimensions

at **Dhyan-Kaksh**

School of Equanimity & Even-sightedness

विषय

ध्यान-कक्ष

- ध्यान-कक्ष यानि समभाव-समदृष्टि का स्कूल (परिचय)

आत्मज्ञान

- आत्मज्ञान
- आत्मज्ञानी की पहचान
- आत्मिक ज्ञान के लिए पहली आवश्यकता
- आत्मिक ज्ञान एवं भौतिक ज्ञान में अंतर
- आत्मिक ज्ञान प्राप्ति से लाभ

शरीर/प्राण/भाव/दृष्टि को सम रखना

- शीश अर्पण व शारीरिक समता साधने का महत्त्व
- प्राण को सम रखने की कला
- भाव
- समभाव
- समभाव साधना
- समदृष्टि
- समबुद्धि एंव समभाव-समदृष्टि का व्यावहारिक रूप

अपनी पहचान

- निज मानव स्वरूप की पहचान
- यथार्थ ब्रह्म स्वरूप की पहचान
- ब्रह्म
- शब्द ब्रह्म
- ओ३म शब्द की महानता व महत्ता

समभाव-समदृष्टि का कायदा

- जिह्वा स्वतन्त्र अर्थात् आहार एवं वाणी संयम
- संकल्प स्वच्छ
- दृष्टि कंचन

आत्मविजय

- आत्मनिरीक्षण
- आत्मसंयम/आत्मनियन्त्रण (भाग-1 और-2)
- आत्मानुशासन एवं आत्मविजय

विचार एवं विवेक

- विचार
- विवेक
- विवेक जाग्रति
- विवेकशील मानव की पहचान

Offline classes and activities

Every Sunday from 12.45 pm to 1.45 pm

at Dhyan-Kaksh, Satyug Darshan Vasundhara,
Bhopani-Lalpur Road, Greater Faridabad - 121002

Online classes can be viewed at

Learn the science of inner dimensions

at **Dhyan-Kaksh**

School of Equanimity & Even-sightedness

विषय

मानवता के गुण

- संतोष-परिभाषा
- संतोष विकसित करने का साधन
- धैर्य-परिभाषा
- धैर्य का व्यावहारिक रूप
- धीर व्यक्ति की पहचान व धैर्य धारणा से लाभ
- सत्य-परिभाषा
- सत्य को विकसित करने का साधन
- सत्-संगति की महत्ता
- सत्यभाषी बनने की महत्ता
- धर्म-परिभाषा
- धर्म का विषय एवं उद्देश्य
- धर्म के निमित्त समर्पण
- निष्कामता-अर्थ
- निष्काम रास्ते की बाधा एवं उससे उबरने की युक्ति
- परोपकार

चित्त-वृत्तियों के निरोध का साधन

- अभ्यास-अर्थ
- अभ्यास सफलता का मूल
- वैराग्य
- वैराग्य-कसौटी
- मौन-अभिप्राय
- मौन और वाणी
- मौन का जीवन महत्त्व

Offline classes and activities

Every Sunday from 12.45 pm to 1.45 pm

at Dhyan-Kaksh, Satyug Darshan Vasundhara,
Bhopani-Lalpur Road, Greater Faridabad - 121002

Online classes can be viewed at

आप इस विषय का वीडियो निम्नलिखित लिंक (QR code) पर स्कैन करके देख सकते हैं

View this class by scanning this QR code link

Initiatives of Satyug Darshan Trust (Regd.) on Humanity and Ethics

INTERNATIONAL HUMANITY OLYMPIAD
www.humanityolympiad.org

HUMANITY DEVELOPMENT CLUB
www.awakehumanity.org

INTERNATIONAL OPEN ORATORY CONTEST
www.dhyankaksh.org

INTERNATIONAL OPEN POETRY RECITATION CONTEST
www.dhyankaksh.org

For FREE workshops in your School, College and groups

Scan for Dhyan-Kaksh Social Media

Contact

Mobile : +91 8595070695
Email: contact@dhyankaksh.org
Website: www.dhyankaksh.org

Scan for Dhyan Kaksh Location

https://bit.ly/3v4O8B2

Disclaimer: The contents of this book are intended to foster universal human values, consciousness, fraternity, and love for humanity without endorsing or promoting any specific religious belief